ISSN: 0973-0583

दलित उत्थान और डॉ० अम्बेडकर का बौद्ध आंदोलन

प्रो० राजीव रंजन

संकायाध्यक्ष, छात्र, कल्याण, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना, बिहार

सारांश

छठी शताब्दी ईसा पूर्व में बुद्ध के आगमन ने प्राचीन भारतीय चिंतन में क्रांति ला दी। आठवीं शताब्दी तक बौद्ध धर्म अपने चरम पर था, लेकिन समय के साथ इसका प्रभाव कम होता गया। 19वीं शताब्दी के अंत में, डॉ0 भदंत आनंद कौसल्यायन, राहुल सांकृत्यायन, भिक्षु जगदीश कश्यप और डॉ0 अम्बेडकर जैसे व्यक्तियों और संगठनों के प्रयासों से इसका पुनरूत्थान हुआ। डॉ0 अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म के पुनरूत्थान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने अपनी विचारधारा और व्याख्याओं से इसे नई दिशा दी। उनका जीवन सामाजिक समानता स्थापित करने के उद्देश्य से प्रेरित एक आंदोलन था। उन्होंने लोकतंत्र और बौद्ध धर्म का समर्थन किया, और बुद्ध के धर्म को अपनाने के लिए न केवल दलितों बल्कि पूरे देश का आह्वान किया। डॉ0 अम्बेडकर का बौद्ध आंदोलन लोकंत्र और समाजवादी समाज की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण है। उन्होंने बुद्ध के विचारों को दर्शाने वाले ''द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा'' ग्रंथ की रचना की और फिर बौद्ध धर्म को अपनाया। 1950 में, उन्होंने मुंबई में ''बौद्ध जनसभा'' की स्थापना की और भारत में बौद्ध संगठनों की स्थापना का मार्गदर्शन किया। उन्होंने बौद्ध धर्म के अध्ययन और प्रचार में खुद को समर्पित किया और सिंहल में बौद्ध विश्व सम्मेलन में लोकतंत्र और बुद्ध के विचारों के महत्व पर जोर दिया। डॉ0 अम्बेडकर बुद्ध की अहिंसा और सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्वतंत्रता के समर्थन से आकर्शित हुए। उन्होंने बौद्ध धर्म, समानता और स्वतंत्रता के संबंधों का विश्लेषण किया और अपने बौद्ध आंदोलन में लगे रहे। उन्होंने व्यापक जन-चेतना के बाद बौद्ध धर्म अपनाने का निर्णय लिया और 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में लगभग पाँच लाख लोगों के साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। इस समारोह की सबसे बड़ी विशेषता 22 प्रतिज्ञाएँ थीं, जो उन्होंने स्वयं लिखी थीं और सभी को दोहराने के लिए कहा था। डॉ0 अम्बेडकर ने ''द बुद्ध एंड हिज धम्मा'' ग्रंथ और 22 प्रतिज्ञाओं के माध्यम से बौद्ध धर्म को एक नया रूप दिया। समानता, स्वतंत्रता और विश्वबंधुत्व के मूल्यों को स्थापित किया गया। शिक्षा की क्रांति, सामाजिक चेतना में वृद्धि और हिंदू रीति-रिवाजों को त्याग दिया । डॉ0 अम्बेडकर ने दलित समाज में स्वतंत्र प्रज्ञा और क्रांतिकारी चेतना को जगाया और भारत को एक प्रबुद्ध राष्ट्र बनाने में योगदान दिया।

शब्द कुंजी: समाज-व्यवस्था, समाजवादी, लोकतंत्र, बौद्ध-धर्म, धर्म क्रांति, समानता, स्वतंत्रता, विश्वबन्धुत्व।

ई० पू० छठी शताब्दी में बुद्ध का आगमन प्राचीन भारतीय चिंतन में एक क्रांतिकारी घटना रही है। तब से लेकर आठवीं शताब्दी तक बौद्ध-धर्म अपने उत्कर्ष पर रहा। परंतु समय के अंतराल में बौद्ध-धर्म का ताप धीरे-धीरे पड़ता गया किंतु वैचारिक स्तर पर यह मौजूद रहा। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में कुछ व्यक्तियों एवं संगठनों के प्रयास से बौद्ध-धर्म का पुनरूत्थान देखा जाता है। जिनमें डॉ० भदन्त आनन्द कौसल्यायन, राहुल सांकृत्यायन, भिक्षु जगदीश कश्यप और डॉ० अम्बेडकर का नाम प्रमुखता से लिया जाता है।

बौद्ध-धर्म के पुनरूत्थान में डॉ० भीमराव अम्बेडकर का काफी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अपनी विचारधारा और व्याख्याओं के द्वारा इसे एक नई दिशा प्रदान की। डॉ० अम्बेडकर का सम्पूर्ण जीवन ही एक आन्दोलन था। आन्दोलन, संघर्ष और डॉ० अम्बेडकर एक दूसरे से पृथक न होकर एक-दूसरे के पूरक हैं। उनका यह सम्पूर्ण आंदोलन मुख्य रूप से समाजवादी समाज के निर्माण के आदर्शो की प्रेरणा देनेवाला एक सामाजिक आन्दोलन है। उनका यह आन्दोलन निश्चित रूप से हिन्दू धर्म तथा हिन्दू समाज-व्यवस्था के विरूद्ध महाविद्रोह था, जो सामाजिक समानता को स्थापित करने के उद्देश्य से प्रेरित रहा। फलत: उनके द्वारा लोकतंत्र और बौद्ध-धर्म का समर्थन किया गया। बुद्ध की विचारधारा को स्वीकार करने में सिर्फ दलित समाज का ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण देशवासियों को बुद्ध के धर्म को स्वीकार करने के लिए आह्वाहन करने

का मुख्य उद्देश्य लोकतंत्रात्मक मूल्यों को स्थापित करने के साथ देश में समाजवादी समाज रचना के निर्माण के लिए समाज में अनुकूल वातावरण तैयार करना था।

लोकतंत्र और समाजवादी समाज रचना की दृष्टि से डॉ अम्बेडकर के बौद्ध आन्दोलन को बहुत ही महत्व प्राप्त है। यह एक धर्म का त्याग कर दूसरे धर्म को स्वीकार करने की बात नहीं है। डॉ० अम्बेडकर ने बुद्धमत को स्वीकार किया। उन्होंने इसके लिए दलित समाज में व्यापक जागृति पैदा की। उसी प्रकार उन्होंने अधिकृत और घोषित रूप से बौद्ध-धर्म को स्वीकार करने के पहले ही बुद्ध के विचारों का संपूर्ण रूप में दिग्दर्शन करनेवाले ''द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा" ग्रन्थ की रचना का कार्य पूरा कर लिया था। इस प्रकार धर्म क्रान्ति का वैचारिक तथा सैद्धांतिक हथियार ''द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा" ग्रन्थ के निर्माण के बाद ही डॉ० अम्बेडकर ने बुद्धमत को स्वीकार करने की घोषणा की। डॉ० अम्बेडकर बौद्ध धार्म के लोकतंत्रवादी और समाजवादी विचारों के कारण ही बौद्ध धर्म की ओर आकर्षित हुए।

डॉ० अम्बेडकर ने बौद्ध-धर्म को स्वीकार करने का अघोषित निर्णय करने के बाद बौद्ध-धर्म के प्रचार कार्य के लिए 1950 में ही बम्बई में ''बौद्ध जनसभा" की स्थापना की। 1950 से ही डॉ० अम्बेडकर के निर्देशन में भारतवर्ष में जगह-जगह पर बौद्ध संगठन एवं बौद्ध संस्थाए स्थापित हो रही थी। डॉ० अम्बेडकर द्वारा धम्मक्रांति की अधिकृत घोषणा होने के पहले ही एक सांस्कृतिक क्रान्ति के आन्दोलन का प्रारम्भ हो गया था।

1950 से ही डॉ० अम्बेडकर विशेष रूप से बौद्ध-धर्म के अध्ययन और प्रचार तथा प्रसार कार्य में जुट गये। सिंहल के बौद्ध विश्व सम्मेलन में भी डॉ० अम्बेडकर ने लोकतंत्र और बुद्ध के विचारों की आवश्यकता का महत्त्व प्रतिपादित किया।[1] वे बौद्ध-धर्म की ओर केवल बुद्ध की अहिंसा के कारण ही आकर्षित नहीं हुए बल्कि इसलिए कि बुद्ध ने सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रता का भी समर्थन किया था। बुद्ध सही में एक सच्चे शिक्षक थे।[2] वे बौद्ध-धर्म की ओर इसलिए भी आकर्षित हुए कि बुद्ध मनुष्य-मनुष्य में किसी भी प्रकार का भेद न मानने की शिक्षा देते है। इसमें जन्म के आधार पर ऊँच या नीच का भेद न मानने की शिक्षा है। इसमें स्त्री और पुरुषों में समानता मानने की शिक्षा है। बुद्ध जातिविहीन समाज का समर्थन करते है।[3] इस तरह डॉ० अम्बेडकर जगह-जगह पर बौद्ध-धर्म, समानता और स्वतंत्रता के संबंधों का विश्लेषण करते हैं। डॉ० अम्बेडकर सातत्य से इस बौद्ध आन्दोलन में जुट गये। बौद्ध-धर्म के स्वीकार्य को डॉ० अम्बेडकर आम जनता का आन्दोलन बनाने की दृष्टि से ही सोच रहे थे और इसी बात में आंदोलन का महत्व छिपा हुआ है।

व्यापक जन-चेतना के बाद डॉ० अम्बेडकर ने बौद्ध-धर्म को स्वीकार करने का निर्णय किया। उन्होंने 10 फरवरी, 1956 को नई दिल्ली में बताया कि आगामी बुद्ध जयन्ती को वे बौद्ध होने की अधिकृत घोषणा करेंगे। इसके बाद डॉ० अम्बेडकर के धर्म दीक्षा की तैयारियाँ काफी जोर-शोर से होने लगी। 13 अक्टूबर 1956 को उन्होंने एक पत्रकार सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा था कि मेरे अनुयायी हीनयान और महायान के मतभेदों से दूर रहें इस बात की मैं पूरी कोशिश करूंगा। इसका स्पष्ट मतलब यह था कि डॉ० अम्बेडकर बौद्ध मत के परम्परागत विवाद से दूर रहकर ही एकदम नये सन्दर्भ में बौद्ध धर्म के सम्बध में सोच रहे थे। उनके लिए बौद्ध धर्म का अर्थ था दुनिया को समानता, स्वतन्त्रता और विश्वबन्धुत्व का सन्देश देनेवाला सामाजिक दर्शन और वह भी भारतीय संस्कृति, विचार और परंपरा से सुसंवाद स्थापित करनेवाला। बौद्ध दर्शन इसी भूमि में पैदा हुआ एक समाजिक क्रांति का दर्शन था। इसलिए बौद्ध धर्म ने उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। बौद्ध धर्म को स्वीकार करने तक उनका भौतिकवादी दृष्टिकोण कहीं लुप्त न हो सका।

14 अक्टूबर 1956 को डॉ० अम्बेडकर के नेतृत्व में और बौद्ध भिक्षु चन्द्रमणि महास्थवीर की प्रमुख उपस्थिति में एक ही समय में और एक साथ लगभग पाँच लाख के करीब लोगों ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। इस दीक्षा समारोह की यदि सबसे बड़ी कोई विशेषता होगी तो वह थी, बाईस प्रतिज्ञाएं[4]। स्वयं डॉ० अम्बेडकर ने इन बाईस प्रतिज्ञाओं को लिखा था और उन्होंने ही इन प्रतिज्ञाओं को स्वयं पढ़ा था और सभी लोगों को इन बाईस प्रतिज्ञाओं का पुनरूच्चारण करने के लिए कहा था।

"द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा" और "बाइस प्रतिज्ञा" के अध्ययन से दोनों में एक विशेष सम्बन्ध दिखाई पड़ता

है। इन बाईस प्रतिज्ञाओं में जिन महत्वपूर्ण बातों पर जोर दिया गया है और जिन बातों को निरर्थक माना गया उनमें ईश्वरवाद, अवतारवाद, पूजा, प्रार्थना आदि है। इसमें श्राद्ध और पिंडदान आदि को नकारा गया है। ब्राह्णों के पौरोहित्य को अस्वीकार किया गया है। पुरोहितशाही का निषेध किया गया है उसमें सभी मनुष्यों में समानता का भाव देखने की प्रतिज्ञा की गई है और समानता की स्थापना के लिए स्वयं को प्रतिबद्ध किया गया है। इसमें बौद्ध धर्म पर पूरी निष्ठा व्यक्त करने के लिए प्रतिज्ञा की गई है। इन बाईस प्रतिज्ञाओं का केवल प्रारंभिक महत्व नहीं है। बल्कि उनके बौद्ध आंदोलन में भी इन बाईस प्रतिज्ञाओं का बहुत ही महत्व है। इन प्रतिज्ञाओं को नागपुर के प्रथम दीक्षा समारंभ के बाद भारत में जगह-जगह पर अब तक हुए सभी बौद्ध धर्म दीक्षा समारंभों में कहलवाया गया है और लोगों से यह प्रतिज्ञा करवाई गई कि वे इन पर अमल करें।

डॉ० अम्बेडकर की इस क्रान्ति ने, इन बाईस प्रतिज्ञाओं ने, लोगों की चेतना ही बदल डाली। यह करिश्मा डॉ० अम्बेडकर के नेतृत्व में था कि उनके कहने पर लाखों दलितों ने देव, धर्म, रस्मों-रिवाजों और ब्राह्मणी पौरोहित्य तथा ब्राह्मणी वर्चस्व को नकार दिया था। इसमें समाज के मूल स्वरूप को ही बदलने की प्रेरणा थी, इसलिए यह एक क्रान्ति थी। आधुनिक भारत में अनिश्वरवाद, आत्मवाद, पुरोहित वर्ग के वर्चस्व का विरोध तथा सामाजिक समानता की मूल प्रेरणा यदि कोई देता है तो वह केवल अम्बेडकरवाद है, अन्य दूसरा कोई नहीं।

14 अक्टूबर 1956 को बौद्ध धर्म दीक्षा समारंभ का पहला कार्यक्रम बाईस प्रतिज्ञाओं के बाद समाप्त हो गया। लेकिन यही उनकी अन्तिम लड़ाई नहीं थी। यह तो उनके मुक्ति आन्दोलन का एक हिस्सा था।

14 अक्टूबर 1956 के व्याख्यान में डॉ० अम्बेडकर ने दलितों के सामने तीन महत्वपूर्ण समस्याएं रखी थी : (1) दलितों के राजनीतिक अधिकारों का सवाल (2) आर्थिक विकास की समस्या अर्थात भूख और गरीबी का सवाल (3) बुद्ध के सिद्धांतों का जीवन में पूरी तरह से पालन। ये तीन सवाल भारत के बौद्धों के लिए एक बहुत ही महत्वूर्ण जिम्मेदारी थी। वर्त्तमान भारत बौद्ध आचार-विचार, संस्कृति तथा सामाजिक चेतना की दृष्टि से एकदम अपरिचित है। इसलिए बुद्ध के सिद्धातों को जीवन दर्शन बनाने के लिए बौद्धों को दृढ़ संकल्पी होना चाहिए। इस बात पर डॉ० अम्बेडकर का विशेष जोर था।[5] यहाँ सवाल खड़ा होता है कि उक्त तीन सवालों में से एक और दो का अर्थ बिलकुल सीधा है कि आर्थिक समानता की लड़ाई और राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति की लड़ाई लड़नी पड़ेगी। सिर्फ बौद्ध बन जाने से काम नहीं चलेगा। जिस तीसरी जिम्मेदारी का विशेष उल्लेख डॉ० अम्बेडकर ने अपने दीक्षान्त भाषण में किया था। इसका संबंध जाति विरोधी और जातिहीन समाज की स्थापना की लड़ाई के साथ है। इसका मतलब यह है कि जिस तरह दलित समाज सामाजिक समानता की लड़ाई लड़ रहा है, जिसके लिए उसने हिन्दू धर्म के विरूद्ध विद्रोह करके बौद्ध धर्म को स्वीकार किया है, उन बौद्धों को जाति विरोधी लड़ाई तो जारी रखनी ही चाहिए लेकिन जातिहीन आचरण भी उन्हें करना चाहिए। अपने अन्तर्गत जाति व्यवस्था को भी उन्हें समाप्त कर देना चाहिए, इसी जिम्मेदारी को पूरी जरह से जीवन में लाने की बात डॉ० अम्बेडकर ने कही थी। क्योंकि भारत जैसे विशाल देश में सदियों पहले ही समानता की परम्परा नष्ट हो चुकी हैं और अब केवल शेष है जातिवाद एवं विषमता। और, इसलिए यह बुद्ध का समानता का दर्शन जिम्मेदारी का पथ है।

बौद्ध होने के बाद उनमें, उनकी मानसिकता में, उनकी सामाजिक चेतना में, उनके सामाजिक आचरण में निश्चित रूप से क्रांतिकारी फर्क दिखाई देता है। दलित समाज बौद्ध हुआ लेकिन उनकी गरीबी अब भी कायम है। लेकिन उनमें सामाजिक चेतना आई है। दलितों में शिक्षा की क्रांति हुई है। जिन दलितों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया और जिन्होंने नहीं किया उनमें बहुत बड़ा फर्क पड़ गया है। नव-बौद्धों में बहुत बड़ी मानसिक क्रांति हुई है। उनके रहन-सहन, संस्कारों और सांस्कृतिक जीवन में परिवर्तन हुआ है। नागपुर में बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने के बाद अपने-अपने गाँव आए नवदीक्षितों ने मरे हुए जानवर फेंकना, उनका मांस खाना बन्द कर दिया। विदर्भ (महाराष्ट्र) में नवबौद्धों ने कोतवाली-कामदार को छोड़ दिये। लोगों ने अपने घर की हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्त्तियाँ, उनके स्थान, पोथियाँ, मालाएँ आदि सब घर से बाहर निकालकर फेंक दिया। नवदीक्षित बौद्धों ने सवर्ण हिन्दुओं की गुलामी के प्रतीकस्वरूप सभी काम करना छोड़ दिया। जैसे मौत

की खबर पहुँचाना, सवर्ण हिन्दुओं के घरों में लकड़ी फाड़ना, उनके शादी-ब्याह में केवल भोजन के लिए काम करना, त्योहारों के अवसर पर उनके घर भोजन मांगने के लिए जाना आदि।

नवदीक्षित बौद्धों ने सभी हिन्दु रस्म-रिवाज, पूजा-प्रार्थना, पुरोहितशाही आदि सभी का त्याग कर दिया। हिन्दु तीर्थस्थानों की यात्रा करना, पिंडदान करना, ब्राह्मण भोजन के लिए सूखा दान आदि देना, त्याग दिया। उसी प्रकार दूसरी बात यह भी हुई कि नवदीक्षित बौद्धों में कम-से-कम पैसा खर्च करके मंगनी, शादी-ब्याह आदि होने लगे। शादी-ब्याह में लेन-देन (दहेज) आदि सब बन्द हो गया। सात-आठ दिन चलनेवाली शादियाँ बस केवल एक दिन या कुछ घंटों में समाप्त हो जाती है। इस प्रकार बौद्ध आंदोलन ने बौद्ध समाज में क्रांतिकारी चेतना पैदा की, इसमें कोई सन्देह नहीं। बौद्ध धर्म के स्वीकार करने के कारण दलित समाज में अपने अधिकारों की भावना पैदा हुई। धर्मान्तरण से ही नवदीक्षित बौद्धों में स्वाभिमान की चेतना पैदा हुई। यह उन्नति के राह पर पहला कदम था।

डॉ० अम्बेडकर के इस बौद्ध आंदोलन ने नवदीक्षित बौद्धों में जाति भेद की चेतना को बहुत हद तक कमजोर बना दिया है, और उसकी निरर्थकता साबित कर दिया है। उनके दिलोदिमाग से ईश्वर मर चुका है। ब्राह्मण पुरोहितवाद, ब्राह्मण वर्ण श्रेष्ठत्व, जातिहीनता की बात खत्म हो गई है। अब वे हर क्षेत्र में समानता चाहते हैं। बौद्ध आंदोलन से नवदीक्षित बौद्धों में एक हिम्मत जागी है और जब हिम्मत होती है तो विचार विकसित होता है। वास्तव में डॉ० अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म को स्वीकार करके दलित मुक्ति आंदोलन को नया दार्शनिक मूलाधार प्रदान किया है।[6] इस तरह बौद्ध धर्म अब साधना, विपश्यना, दार्शनिक चर्चा और इतिहास की चीज नहीं रहा बल्कि वह सामाजिक जीवन का दर्शन बन गया।

बौद्ध धर्म के क्षेत्र में डॉ० अम्बेडकर का कार्य एकदम अलग और विशेषतापूर्ण है। डॉ० अम्बेडकर कोई धर्मपुरूष नहीं थे। न ही उनका बौद्ध आंदोलन अपने अनुयायियों की मोक्ष प्राप्ति के लिए था। उनके इस आंदोलन का उद्देश्य सम्पूर्ण समाज व्यवस्था को बदलने से था। यह आंदोलन उसके पहले के आंदोलनों से एकदम स्वतंत्र नहीं था। बल्कि उन्हीं आंदोलनों से ही यह बौद्ध आंदोलन जुड़ा हुआ था। यह आंदोलन उनके पहले के आंदोलनों की एक श्रृंखला थी और इसी के कारण यह बौद्ध आंदोलन बढ़ता गया।

14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में डॉ० अम्बेडकर के बौद्ध धर्म को अपनाने के बाद 16 अक्टूबर 1956 को चन्द्रपुर में पाँच लाख से ज्यादा लोगों ने बौद्ध धर्म अपनाया। जिस समय डॉ० अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म को स्वीकार करने का अन्तिम निर्णय घोषित किया उस समय उनके साथ भारत के अनेकों दलितों ने भी यही फैसला किया। मद्रास विधान सभा के परिगणित (अछूत) जाति के सदस्य ए0 रत्नम ने घोषित किया था कि परिगणित जाति के लाखों लोग डॉ० अम्बेडकर के परामर्श से बौद्ध होने का विचार कर रहे है।[7] उत्तर प्रदेश के दलित वर्ग के नेता विश्वामित्र ने 15 फरवरी 1956 को पत्रकार सम्मेलन में बताया था कि उनके नेतृत्व में कम-से-कम एक लाख दलितों का जत्था बौद्ध बन जायगा।[8] उसी प्रकार मध्यप्रदेश के उज्जैन[9] और बंगाल के खरगपुर[10] आदि शहरों में डॉ० अम्बेडकर की प्रेरणा से ही बौद्ध होने की प्रक्रिया शुरू हो गयी थी।

26 अक्टूबर 1956 को अकोला (महाराष्ट्र), 3 नवम्बर 1956 को सिंखेड (महाराष्ट) और 12 नवम्बर को मनमाड (महाराष्ट) में हजारों लोगों ने बौद्ध धर्म को अपनाया।[11] नागपुर के बाद बम्बई में 14 दिसम्बर 1956 को लोग लाखों की संख्या में बौद्ध धर्म को स्वीकार करने वाले थे और डॉ० अम्बेडकर स्वयं उसमें रहने वाले थे। लेकिन उसके पहले ही 6 दिसंबर 1956 को उनकी मृत्यु हो गई। उनके महापरिनिर्वाण के बाद भी बौद्ध आंदोलन का यह कारवां रूका नहीं। 6 दिसम्बर 1956 को उनके मृत शरीर की उपस्थिति में बम्बई की दादर चौपाटी पर इकट्ठा विशाल जनसमुदाय ने डॉ० भदन्त आनन्द कौसल्यायन के द्वारा बौद्ध धर्म की दीक्षा ली।[12]

डॉ० अम्बेडकर के महापरिनिर्वाण के बाद इस आंदोलन की सारी जिम्मेदारी उनके राजनीतिक दल रिपब्लिकन पार्टी के सामाजिक कार्यकर्त्ताओं पर आयी जिन्होंने इस आंदोलन को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया। डॉ० अम्बेडकर का बौद्ध धर्म केवल भिक्षु का धर्म या कुछ ही पढ़े-लिखे, या केवल विद्वानों का धर्म नहीं था। उन्होंने अपने दीक्षान्त भाषण (नागपुर) में ही यह स्पष्ट शब्दों में कह दिया था कि, यह नया रास्ता जिम्मेदारी

का है। युवकों को भी कुछ संकल्प करना चाहिए। उन्हें केवल पेट का गुलाम नहीं बनना चाहिए बल्कि अपनी आय का करीबन 20वाँ हिस्सा इस काम में खर्च करने का निश्चय करना चाहिए। उनके इस शब्दों का बहुत ही गहरा अर्थ है कि मुझे सबकों साथ ले चलना है। मतलब वे समाज के उन सबसे निचले स्तर के लोगों की ओर संकेत कर रहे थे जो आज भी गाँवों-देहातों में रहते हैं और उन्नति के रास्ते से कोसों दूर रहे हैं। 'बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय' यह उनकी सबसे प्रिय घोषणा थी। डॉ० अम्बेडकर ने इस दीक्षान्त भाषण में जो महत्त्वपूर्ण बात कही थी वह यह थी कि उन्होंने बौद्ध धर्म को भिक्षु से मुक्त किया। वे कहते हैं कि बुद्ध ने अपने समय के अनुसार अपने धर्म के प्रचार की नीति तैयार की थी। अब हम लोगों को भी अपनी नीति तैयार करनी होगी। इसलिए दीक्षा शुभारम्भ के बाद हर एक को एक-दूसरे को बौद्ध बनाना चाहिए। हर बौद्ध व्यक्ति को एक दूसरे को बौद्ध धर्म की दीक्षा देने का अधिकार है।[15] इससे बौद्ध धर्म के प्रचार और प्रसार का रास्ता और भी आसान हो गया। यह बौद्ध धर्म के अंतर्गत ही अपने आप में एक क्रांतिकारी घोषणा थी।

डॉ० अम्बेडकर की मृत्यु के बाद भी दलित समाज एवं उनके द्वारा स्थापित सभी संगठनों में वही प्रेरणा कायम थी। 16 दिसंबर 1956 को बंबई में विशाल बौद्ध दीक्षा समारोह हुआ। 31 दिसंबर 1956 को अहमदाबाद में पच्चीस हजार लोगों ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। इसमें अखिल भारतीय दलित फेडरेशन के सभी नेता उपस्थिति थे।[14] डॉ० अम्बेडकर की मृत्यु के पश्चात् अखिल भारतीय दलित फेडरेशन के वर्किंग कमेटी की बैठक 31 दिसम्बर 1956 को अहमदनगर में हुई जिसमें यह महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव सम्मत किया गया था कि डॉ० अम्बेडकर ने बुद्ध के धम्म को स्वीकार किया और उन्होंने हमें जो रास्ता बतलाया उस पर हमें सम्पूर्ण विश्वास है और भारत के अछूत समझे गये सारे समाज को बौद्ध समाज में परिवर्तित करने की प्रतिज्ञा यह फेडरेशन करती है।[15]

बौद्ध आंदोलन महाराष्ट्र के गाँव-गाँव, शहर-शहर तक पहुँच गया। फिर यह बौद्ध आंदोलन महाराष्ट्र की सीमा पार करके भारत के अन्य प्रान्तों में भी फैल गया। 13 जनवरी 1957 को आगरा (उत्तर प्रदेश) में एक लाख से भी ज्यादा लोगों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। 8 फरवरी 1957 को दिल्ली में दस हजार लोगों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। 17-18 दिसम्बर 1963 को आगरा में बौद्ध परिषद हुई उस समय एक लाख से भी ज्यादा लोगों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। 27-28 दिसम्बर 1958 को लखनऊ (उत्तर प्रदेश) में कई हजार लोगों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। 1970 में सारनाथ में राजाभाऊ खोब्रागडे की उपस्थिति में हजारों दलितों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया।[16] सारनाथ में डॉ० अम्बेडकर के अन्तिम भाषण की स्मृति में 26 नवम्बर 1972 को मतीराम शास्त्री (सम्पादक दलित चेतना, लखनऊ) के नेतृत्व में दस हजार दलितों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया था।

बिहार प्रान्त में भी यह बौद्ध आन्दोलन पहुँचा। बिहार प्रान्त के विभिन्न इलाकों के करीबन पाँच सौ अछूतों ने 12 जून 1971 को पटना में राजाभाऊ खोब्रागडे की अध्यक्षता में बौद्ध धर्म को अपनाया।[17] जम्मू और कश्मीर के लगभग दो लाख अछूतों ने लामा कुशक बकुला की उपस्थिति में बौद्ध धर्म को अपनाया।[18] पश्चिम बंगाल के प्रमुख नगर कलकत्ता में हजारों लोगों ने बौद्ध धर्म को अपनाया।[19] राजस्थान के अलवर, रावतभाटा में 1978 में बौद्ध दीक्षा समारोह हुआ। अजमेर में 1970 में ही दीक्षा समारोह हुआ। हरियाणा के रोहतक में 1 नबम्बर 1978 को हजारों दलितों ने बौद्ध धर्म को अपनाया।[20] पंजाब तो अम्बेडकरवादी आंदोलन का गढ़ ही है। मध यप्रदेश में बहुत बड़े पैमाने पर बौद्ध दीक्षा समारोह हुए। छत्तीसगढ़ के सतनामी (अछुत) लोगों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। आंध्रप्रदेश के हैदराबाद, विशाखापट्नम आदि इलाकों में लोग लाखों की संख्या में बौद्ध हुए हैं। 1973 में कर्नाटक के मंत्री बी० बसवलिंगप्पा के साथ में हजारों लोगों ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया।[21] डॉ० अम्बेडकर का बौद्ध आंदोलन दक्षिण भारत के सभी प्रांतों में अछूत जातियों में पहुँच गया। इसमें महार और चमार आदि प्रमुख अछूत जातियों के अलावा भंगी, मांग, परिहा, अहेरवार, दोहरे, घुसियाँ, पासी, कोरी जाति के लोगों ने भी बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। विदेशों में रहने वाले दलित जाति के लोगों ने भी बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। लंदन में रहने वाले भारतीय अछूतों ने दिसंबर 1970 में और 25 अप्रैल, 1971 को लगभग दस-बारह हजार लोगों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया।[22] 1993 में पटना के गाँधी मैदान भन्ते सुरई

सुसई एवं मैकु राम, आई. जी. बिहार एवं भन्ते करुणाकृति के नेतृत्व में एक लाख अनुयायियों ने बुद्ध धम्म की दीक्षा ली।

बौद्ध धर्म दलित समाज में उनके मुक्ति का दर्शन बनकर फैला। इसका यदि कोई महत्त्वपूर्ण कारण है तो वह है डॉ० अम्बेडकर का बौद्ध धर्म के प्रति नया दृष्टिकोण। इसमें उनकी तीन बातें बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। (1) बौद्ध धर्म का सामान्यीकरण, (2) समाजीकरण और (3) आधुनिकीकरण इन्हीं तीन बातों के कारण बौद्ध आंदोलन को गति प्राप्त हुआ है। इस तरह बौद्ध आन्दोलन कभी धीमी गति से तो कभी तेज रफ्तार से आगे बढ़ रहा है। दलित समाज बौद्ध तो हो रहा है लेकिन सरकारी आँकड़े के अनुसार यह संख्या बहुत ही कम दिखाई पड़ती है। इस बौद्ध आंदोलन में अभी तमाम दलित जातियां नहीं आई हैं लेकिन भारत की प्रमुख दलित जातियाँ इस बौद्ध आंदोलन की अगुवाई कर रही है, और इसका परिणाम निश्चित रूप से जातिभेद को समाप्त करने में हो रहा है।

निष्कर्ष:

डॉ० अम्बेडकर ने 14 अक्टूबर 1956 को बौद्ध धर्म को स्वीकार करके सचमुच में एक बहुत बड़ी क्रांति प्रारम्भ कर दी। यह क्रान्ति धर्मांतरणवादी और धर्मानतर विरोधी दोनों ही दृष्टि से महत्त्वपूर्ण थी। डॉ० अम्बेडकर इस देश में पुन: अनीश्वरवाद, अनात्मवादी, प्रतीत्य समुत्पादवादी बुद्ध के दर्शन को आम आदमी का दर्शन बनाकर दलित समाज को ही नहीं बल्कि देश को ब्राह्णवाद तथा पुरोहितवाद के शोषण से मुक्त करने के लिए क्रांति का संदेश दिया है। उन्होंने बुद्ध के अनीश्वरवादी, अनात्मवादी, प्रतीत्य समुत्पादवादी का प्रत्यक्ष प्रमाण और अनुमान प्रमाण के अलावा तीसरा प्रमाण न स्वीकार करनेवाले दर्शन को स्वीकार किया।बौद्ध आंदोलन के कारण डॉ० अम्बेडकर ने दलित समाज की स्वतन्त्र प्रज्ञा को जगाया है। भारत में दलित लोगों के दिल और दिमाग इतने शिथिल हो गये थे कि उनमें कुछ नया पैदा होने की बिल्कुल संभावना ही नहीं रह गई थी। ऐसे लोगों की चेतना बदलना कल के समाजवादी क्रान्ति के लिए एक बहुत ही आवश्यक शर्त थी और यह काम डॉ० अम्बेडकर के बौद्ध आन्दोलन ने किया है। उन्होंने भारत में लोकतंत्र को तो मजबूत बनाया है। यह बौद्ध आन्दोलन का परिणाम है एवं बौद्ध धर्म के पुनरुत्थान का कारण भी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1 धर्मदूत (मासिक), सारनाथ, जूलाई 1950, अंक-4

2 डॉ० अम्बेडकर भाषण-दिल्ली, 1950।

3 डॉ० अम्बेडकर भाषण-बम्बई, 27 मई 1953।

4 बुद्ध और उनका धम्म : डॉ० बी. आर. अम्बेडकर द्धारा ली गई 6 दिसम्बर 1956 मे ली गई बाईस प्रतिज्ञाएँ ।

5. डॉ० अम्बेडकर भाषण-नागपुर, दीक्षा समारंग 15 अक्टूबर 1956

6. डॉ० वानखेड़े, नवभारत, जूलाई 1978, नीली जख्म

7. धर्मदूत (मासिक) सारनाथ, मई-जून 1955, अंक-1-2

8. वही, मार्च 1956, अंक-11

9. वही, अप्रैल 1956, अंक-12

10. वही, नवम्बर 1956, अंक-7

11. वही

12. प्रबुद्ध भारत, डॉ० अम्बेडकर महापरिनिर्वाण विशेषांक, 1956, पृष्ठ -9

13. डॉ० अम्बेडकर, नागपुर, दीक्षा समारंग, 15 अक्टूबर 1956

14. प्रबुद्ध भारत, वही, पृष्ठ-49

15. वही, पृष्ठ-53

16. धर्मदूत, फरवरी 1970

17. वही, मई-जून 1971

18. वही, मई-जून 1970, अंक 1-2

19. द महाबोधि, कलकत्ता, दिसम्बर 1970

20. साप्ताहिक प्रजासत्ताक, चन्द्रपुर, 18 दिसम्बर 1978

21. द महाबोधि, कलकत्ता, मई-जून 1978

22. वही, मई-जून, 1971